

[2025] 7 एस.सी.आर. 160 : 2025 आईएनएससी 657

रेणुका प्रसाद

बनाम

राज्य, सहायक पुलिस अधीक्षक के माध्यम से

(आपराधिक अपील संख्या(एँ) 3189 - 3190 / 2023)

9 मई 2025

[सुधांशु धूलिया और के. विनोद चंद्रन, न्यायाधीशगण]

विचारणीय मुद्दा

क्या उच्च न्यायालय ने बरी करने के फैसले को पलटकर और आरोपी व्यक्तियों को दोषी ठहराकर गलती की, जबकि यह फैसला सिर्फ जांच अधिकारी की गवाही पर आधारित था, जो सिर्फ दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 161, के तहत दर्ज किये गए गवाहों के बयानों पर आधारित थी; क्या यह दो संभावित विचारों का मामला था, ऐसी स्थिति में आरोपी के पक्ष में जो विचार हो, उसे माना जाना चाहिए।

शीर्ष टिप्पणियाँ

बरी होने के खिलाफ अपील –दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 161 – भारतीय दंड संहिता, 1860 – धारा 302 सहपठित धारा 120 बी – हत्या – कुल 87 गवाहों में से 71 गवाह, जिनमें चश्मदीद गवाह भी शामिल थे, मुकर गए – विचारण न्यायालय ने आरोपियों को बरी कर दिया – उच्च न्यायालय ने बरी करने के फैसले को पलट दिया और आरोपियों को दोषी ठहराया, जो सिर्फ धारा 161, दंड प्रक्रिया संहिता के तहत दर्ज गवाहों के बयानों पर आधारित जांच अधिकारी की गवाही पर निर्भर था – वैधता:

अभिनिर्धारित: असमर्थनीय– उच्च न्यायालय ने जांच अधिकारी द्वारा पुष्टि किए गए, आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत गवाहों के बयानों पर भरोसा करके गलती की, जो आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 162 का उल्लंघन है – जांच अधिकारी को जांच में जो पता चला है, उसे न्यायालय के सामने मौखिक गवाही या अन्य सबूतों से साफ तौर पर साबित करना होगा, ऐसा न करने पर न्यायालय जांच अधिकारी के इस पूर्वाग्रह के आधार पर किसी को दोषी नहीं ठहरा सकता कि जांच में कोई खास परिस्थिति सामने आई थी – मकसद, साजिश और तैयारी के बारे में जांच अधिकारियों के बयान अभियोजन पक्ष की कहानी के रूप में सामने आते हैं, जैसा कि जांच के दौरान पुलिस द्वारा पूछताछ किए गए विभिन्न गवाहों के धारा 161 के बयानों से पता चलता है; ये बयान आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के तहत पूरी तरह से अस्वीकार्य हैं – सिर्फ इसलिए कि जांच अधिकारियों ने कहा कि गवाहों ने जांच के दौरान ऐसे बयान दिए थे, इससे उन्हें कोई विश्वसनीयता नहीं मिलती, जिससे उन्हें स्वीकार किया जा सके, जब तक कि गवाहों ने खुद ऐसे मकसद या किए गए या न किए गए कामों या ऐसी घटनाओं के बारे में न बताया हो जिनसे साजिश का अनुमान लगाया जा सके और तैयारी भी उचित संदेह से परे साबित हो – उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के बरी करने के आदेश को सिर्फ अनुमानों और अटकलों के आधार पर पलट दिया, पूरी तरह से जांच अधिकारियों की गवाही पर भरोसा करते हुए, जिन्होंने सिर्फ धारा 161 के तहत दर्ज बयानों और आरोपी के स्वैच्छिक बयानों को दोहराया – अभियोजन पक्ष प्रत्येक आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने में विफल रहा – उच्च न्यायालय का फैसला पलट दिया गया, आरोपी बरी। [पैरा 14, 19, 26, 48, 49]

दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील – हत्या – विरोधी गवाह – विचारण न्यायालय ने आरोपियों को बरी कर दिया – उच्च न्यायालय ने बरी करने का फैसला पलट दिया – क्या यह दो संभावित विचारों का मामला था, जिस स्थिति में आरोपी के पक्ष में वाला विचार माना जाना चाहिए:

अभिनिर्धारित: नहीं – इस मामले में, सबूतों से दो अलग-अलग बातें सामने नहीं आ रही हैं – एकमात्र बात जो सामने आती है वह यह है कि अभियोजन पक्ष सभी आरोपियों के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने में विफल रहा, जिसका मुख्य कारण यह है कि सभी गवाह अज्ञात कारणों से विरोधी हो गए – ऐसी दुश्मनी के पीछे जो भी कारण हो, इसके परिणामस्वरूप दोषसिद्धि नहीं हो सकती, जो जांच अधिकारियों की गवाही पर आधारित है जो केवल धारा 161, आपराधिक प्रक्रिया संहिता के

बयानों और आरोपी के स्वैच्छिक बयानों पर आधारित है; पहला धारा 162, आपराधिक प्रक्रिया संहिता का उल्लंघन करता है और दूसरा साक्ष्य अधिनियम की धारा 25, 26 का उल्लंघन करता है – आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 161, 162 – साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 25-27. [पैरा 48]

साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 25-27, 30 – धारा 27 के तहत स्वीकारोक्ति बयान पर भरोसा नहीं किया गया:

अभिनिर्धारित: ए1 द्वारा कथित तौर पर किए गए कबूलनामे, जिसमें साजिश रचने की जगहों और पैसे के लेन-देन के बारे में बताया गया था, से किसी तथ्य का पता नहीं चलता – साजिश और पैसे के लेन-देन के बारे में बताई गई बातें स्वीकार्य नहीं हैं और सिर्फ दो जगहों को बताने से किसी तथ्य का पता नहीं चलता, जब बताई गई बातों को नज़रअंदाज़ कर दिया जाता है – ए5 और ए6 द्वारा कथित तौर पर पहने गए कपड़े और इस्तेमाल किए गए हथियार, जिनका इस्तेमाल उन्होंने अपराध करने के लिए किया था, कथित साजिशकर्ता ए3 के कबूलनामे के बयान पर बरामद किए गए – हालाँकि, न तो कपड़े और न ही हथियार ए5 और ए6 से जुड़े हैं, जिन पर अपराध करने का आरोप था, और न ही ए3, जो एक कथित साजिशकर्ता है, पर मुख्य अपराध, यानी मृतक की हत्या में शामिल होने का आरोप है – धारा 27 के तहत कबूलनामे पर भरोसा नहीं किया जा सकता है और इसका इस्तेमाल दूसरे आरोपियों को फंसाने के लिए नहीं किया जा सकता है – ए1 द्वारा बताई गई जगहों से किसी तथ्य का पता नहीं चला और यह धारा 25 और 26 के तहत आता है। [पैरा 39, 45]

उद्धृत निर्णयजन्य विधि

एनसीटी दिल्ली सरकार बनाम सुनील [2000] सप्लीमेंट 5 एससीआर 144 : (2001) 1 एससीसी 652; रिज़वान खान बनाम छत्तीसगढ़ राज्य [2020] 7 एससीआर 546 : (2020) 9 एससीसी 627 – अलग माना गया।

रमेश बनाम हरियाणा राज्य [2016] 8 एससीआर 936:(2017) 1 एससीसी 529; चंद्रप्पा बनाम कर्नाटक राज्य [2007] 2 एससीआर 630 : (2007) 4 एससीसी 415; राज्य, हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप कुमार [2018] 2 एससीआर 656: (2018) 13 एससीसी 808; बॉम्बे राज्य बनाम काठी

कालू ओघड़ [1962] 3 एससीआर 10; मोहम्मद खालिद बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [2002] सप्लीमेंट 2 एससीआर 31: (2002) 7 एससीसी 334; महबूब अली बनाम राजस्थान राज्य [2015] 10 एससीआर 553: (2016) 14 एससीसी 640; काली राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य [1974] 1एससीआर722: (1973) 2 एससीसी 808; आर. शाजी बनाम केरल राज्य [2013] 3 एससीआर 1172: (2013) 14 एससीसी 266; राजेंद्र सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [2007] 8 एससीआर 834: (2007) 7 एससीसी 378; राज्य (एनसीटीदिल्ली) बनाम नवजोत संधू [2005] सप्लीमेंट 2 एससीआर 79: (2005) 11 एससीसी 600; हिमाचल प्रदेश प्रशासन बनाम ओम प्रकाश [1972] 2 एससीआर 765: (1972) 1 एससीसी 249; महाराष्ट्र राज्य बनाम दामू [2000] 3 एससीआर 880 : (2000) 6 एससीसी 269; रूमी बोरा दत्ता बनाम असम राज्य [2013] 3 एससीआर 801 : (2013) 7 एससीसी 417; राजा बनाम हरियाणा राज्य [2015] 3 एससीआर 947: (2015) 11 एससीसी 43; पांडुरंग कालू पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य [2002] 1 एससीआर 338: (2002) 2 एससीसी 490; जॉनपांडियन बनाम राज्य [2010] 15 एससीआर 1012: (2010) 14 एससीसी 129; कश्मीरा सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य [1952] 1 एससीआर 526: (1952) 1 एससीसी 275; हरिचरण कुर्मी बनाम बिहार राज्य [1964] 6 एससीआर 623; राज्य बनाम छगनलाल गंगाराम लावर, 1954 एससीसी ऑनलाइन बॉम 69 -संदर्भित।

अधिनियमों की सूची

भारतीय दंड संहिता, 1860; भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872; दंड प्रक्रिया संहिता, 1973

प्रमुख शब्दों की सूची

दोषमुक्ति के विरूद्ध अपील ; जांच अधिकारियों (आईओ) की गवाही; जांच अधिकारी की गवाही केवल धारा 161, दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत गवाहों के बयानों पर आधारित; केवल धारा 161, दण्ड प्रक्रिया संहिताके बयानों पर आधारित जांच अधिकारियोंकी गवाही के आधार पर दोषसिद्धि; धारा 161, दण्ड प्रक्रिया संहिताके तहत गवाहों द्वारा दिए गए बयान; गवाहों का मुकर जाना; विचारण में गवाहों की दुश्मनी; चश्मदीद गवाहों का मुकर जाना; भाई-बहनों के बीच दुश्मनी; धारा 27, साक्ष्य अधिनियम, 1872; हमलावरों की पहचान करने में विफल; हत्या से मौत; साजिश; स्वीकारोक्ति बयान; मकसद; तैयारी; दो संभावित उचित विचार; कोई दो विचार नहीं; दोषी साबित होने तक आरोपी के निर्दोष होने

की धारणा; आरोपी के स्वैच्छिक बयान; एक तथ्य की खोज; अपराध में इस्तेमाल किए गए हथियारों, माचिसों की बरामदगी; कपड़ों की बरामदगी; मुद्रा की जब्ती; टेस्ट पहचान परेड (टी आई पी); जब्ती और बरामदगी; अभियोजन पक्ष लगाए गए और आरोपित आरोपों को साबित करने में विफल रहा।

मामले की उत्पत्ति

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 3189-3190/2023 कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु के सीआरएलए संख्या 870/2017 में दिनांक 27.09.2023 और 05.10.2023 के निर्णय और आदेश से

साथ में

आपराधिक अपील संख्याएँ 3399 और 85-86/2024

अधिवक्तागण

अपीलकर्ता के वकील:

रत्नाकर दाश, सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ वकील, जी शिवबालामुरुगन, सेल्वराज महेन्द्रन, सी.धिकेशवन, सुश्री रतन प्रिया प्रधान, हरिकृष्णन पी.वी., सी. कविन अनंत, श्रीमती वैजयंती गिरीश, गिरीश अनंतमूर्ति, आयुष कौशिक, सौगत पति।

प्रतिवादी के वकील:

अमन पंवार, ए.ए.जी., वी.एन. रघुपति, श्रेय ब्रह्मभट्ट।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

न्यायमूर्ति के. विनोद चंद्रन,

1. झूठ बोलने वाले गवाह, न्यायालय में मुकर जाना और आपराधिक कानून के बुनियादी सिद्धांतों की पूरी जानकारी के बिना की गई ज़रूरत से ज़्यादा जांच, अक्सर अभियोजन पक्ष को मज़ाक बना देती है। गवाह अपने पिछले बयानों से मुकर जाते हैं, बरामदगी से इनकार करते हैं, जांच के दौरान बताई गई गंभीर परिस्थितियों से अनजान होने का नाटक करते हैं और चश्मदीद गवाह अंधे हो जाते हैं। यह कुल 87 गवाहों में से 71 का एक क्लासिक मामला है, जिसमें चश्मदीद गवाह भी शामिल हैं, जो मुकर गए, जिससे अभियोजन पक्ष पुलिस और सरकारी गवाहों की गवाही पर निर्भर रह गया। यहां तक कि एक छोटा लड़का, जो अहम चश्मदीद गवाह था, जिसने अपने पिता को बेरहमी से मारते हुए देखा था, वह भी हमलावरों की पहचान नहीं कर पाया।
2. अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया कि पिता की संपत्ति के बंटवारे को लेकर हुए मतभेदों के कारण; एक उद्यमी जिसने कई शिक्षण संस्थान स्थापित किए थे, ए1 और उसका भाई, पीडब्लू4, आपस में झगड़ रहे थे। मृतक, जो उन संस्थानों में से एक का कर्मचारी था, जिसे बाद में ए 1 के हिस्से में दिया गया था, संपत्ति के बंटवारे के बाद पी डब्लू 4 द्वारा चलाए जा रहे एक संस्थान में शामिल होने के लिए इस्तीफा दे दिया। अभियोजन पक्ष के अनुसार, ए 1 की दुश्मनी मृतक के भाई-बहनों की दुश्मनी में सक्रिय रूप से शामिल होने और पी डब्लू 4 का पूरी तरह से साथ देने के कारण हुई। ए 1 ने अपने कर्मचारियों ए 2 से ए 4 के साथ मिलकर, ए 7, एक वकील के माध्यम से, मृतक की हत्या करने के लिए ए 5 और ए 6 को काम पर लगाया। कहा जाता है कि ए 5 और ए 6 ने 28.04.2011 को शाम 07:45 बजे मृतक के बेटे, पी डब्लू 8 के सामने, मृतक की बेरहमी से हत्या कर दी। पी डब्लू 8 ने तुरंत अपने रिश्तेदारों से संपर्क किया और मृतक को अस्पताल ले जाया गया जहाँ उसी दिन रात 08:40 बजे उसने अंतिम सांस ली।
3. प्रथम सूचना कथन (एफ आई एस) पी डब्लू 8 ने दर्ज कराई थी, जिसके बाद अपराध दर्ज हुआ और जांच शुरू हुई। जैसा कि बताया गया, विचारण में 87 गवाहों को पेश किया गया ताकि वे

हत्या, मकसद, साजिश की योजना बनाने के लिए हुई मीटिंग, तैयारी, घटना के बाद क्या हुआ और गिरफ्तारी, बरामदगी, रासायनिक विश्लेषण वगैरह के बारे में बता सकें; लेकिन सब बेकार गया क्योंकि ज़्यादातर गवाह मुकर गए, खासकर वे जो अहम थे। विचारण न्यायालय ने आरोपी को बरी कर दिया क्योंकि हत्या से जुड़े अलग-अलग पहलुओं को साबित करने के लिए पेश किए गए बड़ी संख्या में गवाहों से अभियोजन के केस को कोई सपोर्ट नहीं मिला, और सरकारी गवाहों को छोड़कर बाकी सभी गवाह मुकर गए। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने बरी करने के फैसले को पलट दिया और ए1 से ए6 को भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 302 के साथ धारा 120-बी के तहत दोषी ठहराया। विचारण न्यायालय द्वारा **ए7** को बरी करने के फैसले को उच्च न्यायालय ने बरकरार रखा।

4. ए1 ने एक अपील दायर की है जिसमें श्री सिद्धार्थ लूथरा, विद्वान सीनियर वकील, आरोपी/अपीलकर्ता की ओर से पेश हुए। श्री रत्नाकर डैश, विद्वान सीनियर वकील, ए2 से ए6 द्वारा दायर अन्य अपीलों में पेश हुए। श्री अमन पंवार, विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता, राज्य की ओर से पेश हुए। अपीलकर्ताओं की ओर से पेश हुए दोनों विद्वान सीनियर वकीलों और विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता को सुना और अभिलेख देखे।
5. खंडपीठ ने शुरू में ही चंद्रप्पा बनाम कर्नाटक राज्य मामले में दिए गए फैसले पर विचार किया, जिसमें इस न्यायालय ने बरी करने के फैसले के खिलाफ अपील पर सुनवाई करते समय अपीलीय न्यायालय की शक्तियों के बारे में सामान्य सिद्धांत बताए थे। ये सिद्धांत जाने-माने हैं; चूंकि विवादित फैसले में उनका उल्लेख किया गया है, इसलिए हम उन्हें दोहराएंगे नहीं। हमें यह पता लगाना है कि क्या खंडपीठ ने बरी करने के आदेश को रद्द करते समय इन सिद्धांतों का पूरी तरह से पालन किया है। क्या, अपील में दी गई पूरी शक्ति का इस्तेमाल करते हुए, मामले में पेश किए गए सबूतों की समीक्षा, पुनर्मूल्यांकन और विचार करते समय, खंडपीठ ने सावधानी बरती है, इस जाने-माने मौलिक सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए कि सामान्य कानून के तहत आरोपी को मिलने वाली निर्दोषता की धारणा, बरी करने के आदेश के कारण और मजबूत हो जाती है। क्या विचारण न्यायालय ने यह राय बनाने में बिल्कुल अनुचित काम किया कि मामले में दोष साबित करने के लिए अपर्याप्त सबूत थे और क्या यह दो संभावित विचारों का मामला था, जिस स्थिति में आरोपी के पक्ष में वाला विचार अपनाया जाना चाहिए था।

6. पी.डब्लू.8 वह चश्मदीद गवाह है जिसने घटना के बारे में बताया लेकिन हमलावरों या बरामद हथियारों की पहचान करने में विफल रहा, बावजूद इसके कि प्रथम सूचनात्मक बयान में स्पष्ट रूप से उनकी पहचान करने की उनकी क्षमता बताई गई थी, जो अचानक झाड़ियों से बाहर आ गए; जब वह और उसके पिता टहल रहे थे, तो उन्होंने उसके पिता पर बेरहमी से हमला किया और पैदल भाग गए। जबकि एम.ओ.6 और एम.ओ. 7, मृतक के चश्मे और मोबाइल, जो पुलिस ने घटनास्थल से ज़ब्त किए थे, उनकी पहचान हो गई थी, गवाह दोनों अपीलकर्ताओं; ए5 और ए6 में से किसी की भी पहचान नहीं कर पाया। पी.डब्लू.8 को हथियार दिखाए भी नहीं गए, क्योंकि उसने उन्हें पहचानने में अपनी असमर्थता जताई थी। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत बयान में बताए गए मकसद के बारे में पी.डब्लू.8के ज्ञान से इनकार किया गया। पी.डब्लू.1 और पी.डब्लू.9 वे लोग थे जो अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, घटना के तुरंत बाद घटनास्थल पर आए थे, जिन्होंने दो लोगों को भागते हुए भी देखा था। पी.डब्लू.1 ने घटनास्थल पर अपनी मौजूदगी से पूरी तरह इनकार कर दिया, जबकि पी.डब्लू.9 ने सिर्फ एक व्यक्ति को भागते हुए देखने की बात कही। पी.डब्लू.9 ने घायल और उसके बेटे को देखने की गवाही दी, जिनमें से बाद वाले को रिश्तेदारों को फोन करने की सलाह दी गई थी। उसने पुलिस को फोन किया और एम्बुलेंस बुलाई, लेकिन उसके आने से पहले ही घायल को एक पिक-अप वैन में अस्पताल ले जाया गया। पी.डब्लू.1 और पी.डब्लू. 9 द्वारा धारा 161 के तहत दिए गए बयान, जिसमें भागने वाले लोगों की पहचान करने की उनकी क्षमता और मकसद के बारे में उनकी जानकारी; इलाके के निवासी होने और इलाके के प्रमुख लोगों के बीच भाई-बहन की दुश्मनी के कारण साजिश रचे जाने की बात कही गई थी, उन सभी से इनकार किया गया।
7. पी.डब्लू.2, मृतक का भाई, पी.डब्लू.3, उसका चाचा और पी.डब्लू.10, उसकी पत्नी, से पूछताछ की गई ताकि जांच और मकसद को साबित किया जा सके। उन सभी ने घायल को अस्पताल में देखा, पच्चीस चोटों के बारे में बताया, जांच की बात मानी और मृतक के कपड़े और दूसरी निजी चीज़ों की पहचान की, जिन्हें पुलिस ने शव से ज़ब्त किया था। पी.डब्लू.2 ने हालांकि अपने भाई के ए.1 के साथ काम करने और बाद में असहमति के कारण इस्तीफ़ा देने के बारे में बताया, लेकिन उसने ए.1 के भाई पी.डब्लू.4 के प्रति वफ़ादारी के कारण मृतक और ए.1 के

बीच सक्रिय दुश्मनी के अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया; यह उसके धारा 161 के बयान से अलग था। हैरानी की बात है कि मृतक की पत्नी ने भी पुलिस को दिए अपने बयान से इनकार कर दिया कि ए.1 ने मृतक का अपमान किया था और उसे धमकी दी थी। पी.डब्लू.3 मृतक का चाचा था जिसने पी.डब्लू.2 और पी.डब्लू.10 के साथ मृतक को अस्पताल में देखा था। मकसद, साजिश और आकस्मिक परिस्थितियों को साबित करने के लिए कई गवाहों से पूछताछ की गई, जो आखिरकार मृतक की हत्या का कारण बनीं, और वे सभी मुकर गए। अपीलीय अदालत ने हालांकि यह स्वीकार किया कि ये सभी गवाह मुकर गए, लेकिन उसने अभियोजन पक्ष द्वारा पेश की गई कहानी को देखा जैसा कि गवाहों के धारा 161 के बयानों में बताया गया था, जिसे गवाहों ने अदालत में सुनवाई के दौरान स्वीकार नहीं किया।

8. पी.डब्लू.4, जो ए.1 का भाई था, और जिसके साथ मृतक का संबंध था, और जो मकसद के बारे में बताने वाला मुख्य गवाह था, उसने भाइयों के बीच संपत्ति के बंटवारे की बात तो मानी, लेकिन उनके बीच किसी पुरानी दुश्मनी से इनकार किया। उसने यह भी इनकार किया कि उसने अपने पिता को ए.1 के कामों के बारे में शिकायत करते हुए कोई चिट्ठी लिखी थी। विचारण के दौरान उसे दिखाई गई उस चिट्ठी की फोटोकॉपी से उसने इनकार कर दिया, हालांकि उसने माना कि उस पर दिख रहा सिग्नेचर उसी जैसा था। अभियोजन पक्ष ने अपराध से जुड़े अलग-अलग पहलुओं और उसके बाद क्या हुआ, यह साबित करने की कोशिश की; (i) साजिश; जो आरोपियों द्वारा की गई बैठक के ज़रिए रची गई थी, जिसका मकसद मन की सहमति साबित करना था, अनुबंध हत्यारे को ढूंढने के लिए की गई पूछताछ, अपराध को कबूल करने के लिए संपर्क किए गए लोग; (ii) तैयारी; जैसे, चाकुओं की खरीद, एक मोटरबाइक और पिकअप वैन में लगाने के लिए नकली नंबर प्लेट का इंतजाम, जिनका इस्तेमाल अपराध स्थल से भागने और छिपने की जगह तक पहुंचने के लिए किया गया था; और (iii) खुद मकसद; मेडिकल कॉलेज के कर्मचारियों, पी.डब्लू.57 से पी.डब्लू.62 और पी.डब्लू.72, जिसमें प्रशासनिक अधीक्षक और कॉलेज के प्राचार्य शामिल थे, के ज़रिए ए.1 और पी.डब्लू.4 के बीच दुश्मनी साबित करने की कोशिश की गई, लेकिन यह सब ताश के पत्तों की तरह ढह गया, जब ये सभी गवाह मुकर गए। मकसद, साजिश, पहले की गई तैयारी, और अपराध के बाद जो हुआ, जैसा कि अभियोजन पक्ष ने पेश किया था, वह धारा 161 के बयानों

से साफ है कि यह सिर्फ एक मनगढ़ंत कहानी बनकर रह गया; जो विचारण में साबित नहीं हुआ।

9. हैरानी की बात यह है कि सभी पंच गवाह, जिन्होंने अलग-अलग बरामदगी की पुष्टि की थी, जैसे कि ए.2 से ए.5 से ज़ब्त कैश, इस्तेमाल किए गए हथियार, और अपराध के समय आरोपियों द्वारा पहने गए कपड़े, वे भी मुकर गए। हम प्रदर्श पी.49, यानी अपराध में इस्तेमाल किए गए चाकुओं की बरामदगी, और प्रदर्श पी.50, यानी अपराध के समय ए.5 और ए.6 द्वारा पहने गए कपड़ों की बरामदगी के बारे में थोड़ी देर बाद बात करेंगे, जिसे एफ.एस.एल.प्रतिवेदन और सामने आने वाले विश्लेषण के नतीजे के साथ देखना होगा। हमने यह भी देखा कि अनुलग्नक पी.51 और पी.54 के तौर पर दो महज़र पेश किए गए थे, जिसमें कथित तौर पर ए.1 ने कबूल किया और उस जगह की ओर इशारा किया जहाँ साज़िश रची गई थी और पैसे का लेन-देन हुआ था। हालाँकि, यह भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 के तहत कोई कबूलनामा नहीं है, क्योंकि बताई गई दोनों जगहों से कोई ठोस चीज़ बरामद नहीं हुई, जिससे किसी तथ्य का पता चलता। साज़िश के बारे में कबूलनामे के बयान पर, ज़ाहिर है, बिल्कुल भी भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 और 26 के दायरे में आता है। गंभीर परिस्थितियों को साबित करने के लिए जांचे गए दूसरे गवाह भी मुकर गए, जिसके बाद न्यायालय ने जांच अधिकारियों, पी.डब्लू. 83, 84 और 87 के सबूतों का सहारा लिया।
10. सबूतों के विश्लेषण की शुरुआत करते हुए उच्च न्यायालय ने सबसे पहले यह माना कि इसमें कोई शक नहीं कि रामकृष्ण की हत्या हुई थी, जो विचारण न्यायालय का भी निष्कर्ष है और हमारे पास इससे असहमत होने का कोई कारण नहीं है। पी.डब्लू.8, जो एक चश्मदीद गवाह था, और पी.डब्लू.9, जिसने घटना के तुरंत बाद मृतक का कटा हुआ शरीर देखा था, साथ ही पी.डब्लू.2, 3 और 10, भाई, चाचा और पत्नी के सबूतों से, जिन्होंने अस्पताल में मृतक का शरीर देखा और लगी चोटों के बारे में बताया, यह साफ तौर पर साबित होता है कि मृतक पर बेरहमी से हमला किया गया था। शव परिक्षण प्रतिवेदन और डॉक्टर, पी.डब्लू.74 द्वारा बताए गए मौत के कारण से भी यह साबित होता है कि मृतक को लगे कटने के घावों के कारण उसकी हत्या हुई थी, जो मौत से पहले के थे। हमें इस मुद्दे पर और बात करने की ज़रूरत नहीं है और हम

विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय से पूरी तरह सहमत हैं कि मृतक की बेरहमी से हत्या की गई थी।

11. उच्च न्यायालय ने पाया कि सरकारी गवाहों को छोड़कर बाकी सभी गवाह मुकर गए थे, इसलिए उसने सरकारी गवाहों, खासकर अनुसंधानकर्ता और जांच के दौरान बरामद की गई चीजों के सबूतों पर ध्यान दिया। उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय के दो फैसलों, स्टेट, गवर्नमेंट ऑफ़ एन.सी.टी.ऑफ़ दिल्ली बनाम सुनील और रिज़वान खान बनाम स्टेट ऑफ़ छत्तीसगढ़ पर भी भरोसा किया, यह जानने के लिए कि अदालतों को हमेशा पुलिस अधिकारियों पर अविश्वास करने की ज़रूरत नहीं है। हमें इस बात पर ज़ोर देना होगा कि उक्त फैसलों से निकले प्रस्ताव साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के तहत की गई बरामदगी या तलाशी या अवरोध के दौरान ज़ब्त की गई चीजों के संदर्भ में थे।
12. सुनील और एक अन्य मामले में, उच्च न्यायालय ने खून से सनी निकर की बरामदगी को मानने से इनकार कर दिया क्योंकि कोई स्वतंत्र गवाह नहीं थे। आरोपी द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर बरामदगी के एक मामले और तलाशी के दौरान हुई खोज के बीच अंतर किया गया, जहाँ कोड के चैप्टर VII के तहत स्वतंत्र गवाहों की मौजूदगी पर ज़ोर दिया जाता है। यह माना गया कि यह सोचना गलत है कि धारा 27 के तहत हर बरामदगी को स्वतंत्र गवाहों द्वारा अटेस्ट किया जाना ज़रूरी है और यह पुलिस अधिकारी की ज़िम्मेदारी है कि वह बरामदगी को और ज़्यादा विश्वसनीय बनाने के लिए ऐसे गवाहों को मौजूद रखे। लेकिन ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें कोई गवाह मौजूद न हो या किसी ने महज़र पर हस्ताक्षर करने से मना कर दिया हो, जिससे हमेशा बरामदगी के सबूत को खारिज नहीं किया जा सकता, खासकर जब पुलिस अधिकारी की गवाही किसी भी तरह से संदिग्ध न पाई जाए और विश्वसनीय भी हो। यह माना गया कि यह पुरानी सोच और औपनिवेशिक मानसिकता है कि पुलिस अधिकारी के कामों को हमेशा शुरू से ही अविश्वास की नज़र से देखा जाए। रिज़वान खान तीन जजों की बेंच का फैसला था जिसने सुनील और एक अन्य के फैसले को सही ठहराते हुए कहा कि अगर पुलिस गवाह भरोसेमंद पाए जाते हैं, तो ऐसी गवाही पर भरोसा करके दी गई सज़ा में कोई गलती नहीं मानी जा सकती। उसमें, यह एक मोटर-साइकिल से नशीले पदार्थ की बरामदगी का मामला था जिसमें आरोपी यात्रा कर रहे थे, वाहन को रोकने के बाद तलाशी ली गई थी।

पंचनामा के गवाह मुकर गए लेकिन पुलिस अधिकारियों की गवाही, जो भरोसेमंद पाई गई, उस पर भरोसा किया गया।

13. हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप कुमार, यह भी एक ऐसा मामला था जिसमें गैर-कानूनी सामान की बरामदगी की पुष्टि करने के लिए कोई स्वतंत्र गवाह नहीं थे, क्योंकि उस दिन बहुत ज़्यादा ठंड होने के कारण कोई भी उपलब्ध नहीं था। सज़ा आरोपी से गैर-कानूनी सामान की ज़ब्ती की गवाही पर आधारित थी, जैसा कि पुलिस अधिकारियों ने गवाही दी थी। हम इस न्यायालय द्वारा तय किए गए उपरोक्त सिद्धांत से भटक नहीं सकते, लेकिन सिर्फ़ एक चेतावनी देना चाहते हैं कि धारा 27 के तहत की गई बरामदगी, इस मामले में उच्च न्यायालय के निष्कर्षों के संदर्भ में, ज़रूरी तौर पर अपराध और आरोपी से जुड़ी होनी चाहिए, ऐसा न होने पर बरामदगी का कोई मतलब नहीं है। हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि कबूलनामा केवल किसी ऐसी बात की खोज के संबंध में हो सकता है जिससे कोई भौतिक वस्तु बरामद हो, और यह असल अपराध के बारे में किसी भी कबूलनामे के संबंध में नहीं हो सकता, जैसा कि पुलुकुरी कोट्टाया बनाम सम्राट मामले में कहा गया है।
14. उच्च न्यायालय ने सिद्धांत बताने के बाद, पी.डब्लू. 83, 84 और 87 के सबूतों की जांच की। पी.डब्लू. 83 ने जांच शुरू की, जिसे एम.ओ.40 नाम का पत्र सौंपा गया था, जिसे कथित तौर पर पी.डब्लू.4 ने अपने पिता को लिखा था; हालांकि, पी.डब्लू.4 ने अपनी गवाही में इससे इनकार किया। उच्च न्यायालय ने पी.डब्लू. 83 के सबूतों पर चर्चा करते हुए खास तौर पर पी.डब्लू. 1, 5, 6, 9, 12, 13, 26 और 51 द्वारा दिए गए धारा 161 के बयानों का जिक्र किया, जिनकी पुष्टि पी.डब्लू.83 ने की थी कि ये बयान पुलिस के सामने दिए गए थे। यह देखते हुए कि पी.डब्लू.83 से प्रतिपरीक्षण में सामान्य सुझावों के अलावा, जिन्हें उसने नकार दिया था, उसे बदनाम करने के लिए कुछ भी नहीं था और इसलिए पी.डब्लू.83 की गवाही पर कोई असर नहीं पड़ता है, खंडपीठ ने कहा कि इसे खारिज करने का कोई कारण नहीं है। हमें डर है कि उच्च न्यायालय ने जांच अधिकारी द्वारा पुष्टि किए गए गवाहों द्वारा धारा 161 के तहत दिए गए बयानों पर भरोसा करके गंभीर गलती की है, जो स्पष्ट रूप से धारा 162 का उल्लंघन है और धारा 161 के बयानों का किस खास इस्तेमाल के लिए किया जा सकता है, जैसा कि हम थोड़ी

देर बाद और विस्तार से बताएंगे। यह भी प्रासंगिक है कि पी.डब्लू.83 द्वारा बताई गई साजिश की बात, जो उसे ए.7 ने बताई थी, स्पष्ट रूप से सबूत के तौर पर स्वीकार्य नहीं है।

15. पी.डब्लू.84 की गवाही में ए5 के स्टाफ क्वार्टर और ए6 के पास से क्रमशः 8,50,000/- रुपये और दो मोबाइल फोन ज़ब्त करने के बारे में बताया गया, जिसकी जानकारी के सोर्स का खुलासा नहीं किया गया था, इस पर ज़ोर दिया गया। ए3 की गिरफ्तारी, ए3 से 2,00,000/- रुपये और एक मोबाइल फोन ज़ब्त करने पर भी भरोसा किया गया। विचारण न्यायालय ने इन बरामदगियों पर कोई भरोसा नहीं किया क्योंकि इसे धारा 27 के तहत स्वीकार्य नहीं पाया गया; जिससे उच्च न्यायालय सहमत नहीं हुआ और इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता के धारा 102 के तहत स्वीकार्य पाया। धारा 102 के तहत ज़ब्ती, जब तक कि यह अपराध से जुड़ी न हो, आरोपी को कथित साजिश के आधार पर हत्या का दोषी ठहराने के लिए इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता। लेकिन ज़्यादा ज़रूरी बात यह है कि बरामद पैसे के सिर्फ़ बंडल की पहचान न्यायालय में पी.डब्लू.78, एक ए.एस.आई.जो ज़ब्ती के समय पी.डब्लू.84 के साथ था, और पी.डब्लू.84 ने की, क्योंकि बरामद कैश की कोई सही वस्तुसूचि नहीं बनाई गई थी। इसके अलावा, हालांकि पी.डब्लू.84 ने बताया कि बरामद कैश बंडलों में था और उन पर बैंकों के नाम की पर्चियां लगी थीं, लेकिन बैंकों से इसके सोर्स का पता लगाने की कोई कोशिश नहीं की गई। इसलिए पैसा अपराध से जुड़ा नहीं था और मोबाइल फोन के कॉल डेटा रिकॉर्ड विचारण में साबित नहीं हुए।
16. अब हम अनुशंधानकर्ता की बात करते हैं, जिन्होंने जांच पूरी की और आरोपपत्र समर्पित की, पी.डब्लू.87, जिनके सामने ए.3, ए.5 और ए.6 को पी.डब्लू.84 द्वारा पेश किया गया, जिसके बाद जांच पी.डब्लू.87 द्वारा की गई। यह पी.डब्लू.87 की गवाही थी कि ए.3 के स्वैच्छिक बयानों से ए.2 का पता चला, जिसके स्टाफ क्वार्टर से 2,58,000 रुपये और दो मोबाइल फोन बरामद किए गए। ए.1 को भी गिरफ्तार किया गया, जिसने कथित तौर पर पी.डब्लू.4 और मृतक के साथ अपनी दुश्मनी के बारे में बयान दिए थे। ये स्वैच्छिक बयान और ए.3 के स्वीकारोक्ति बयान, धारा 27 के तहत, पी.डब्लू.87 को अमराज्योति फार्मस तक ले गए, जहाँ से हथियार (एम.ओ.10 और एम.ओ.11) और एक मोटरसाइकिल (एम.ओ.49) प्रदर्श पी.49 महजर के अनुसार बरामद की गई और एम.ओ.12 से एम.ओ.15 तक ए.5 और ए.6 द्वारा पहने गए कपड़े

प्रदर्श पी.113, महजर के अनुसार बरामद किए गए। पी.डब्लू.87 की गवाही में पी.डब्लू.5 के बारे में भी बात की गई, जो मृतक के करीब था और उसने ए.1 और पी.डब्लू.4 के बीच दुश्मनी के बारे में बताया था; जिसे न्यायालय में पी.डब्लू.5 ने नकार दिया। पी.डब्लू.87 के बयान को पढ़ने से पता चलता है कि उसने सिर्फ विभिन्न आरोपियों द्वारा दिए गए स्वैच्छिक बयानों के बारे में बात की है और गवाह द्वारा बताई गई कोई भी जांच भरोसे के लायक नहीं है। हमें स्टेट ऑफ़ बॉम्बे बनाम काठी कालू ओघड़, ग्यारह जजों की बेंच, में सर जेम्स फिट्ज़जेम्स स्टीफन, जो साक्ष्य अधिनियम के मुख्य रचैता थे, के एक उद्धरण की याद आती है:

“अगर कानून में आरोपी व्यक्ति से ज़बरदस्ती सबूत लेना जायज़ है, तो मेहनत वाली जांच और दूसरे लोगों, चीज़ों और दस्तावेज़ों की लंबी जांच का मुश्किल रास्ता क्यों अपनाना? यह सही कहा गया है कि इस विशेषाधिकार को खत्म करने से कानून लागू करने वालों को यह बढ़ावा मिलेगा कि वे “धूप में सबूत ढूंढने के बजाय आराम से छांव में बैठकर किसी बेचारे की आंखों में लाल मिर्च रगड़ें”।

(स्टीफन, आपराधिक कानून का इतिहास, पृष्ठ 442)

17. उच्च न्यायालय ने पी.डब्लू. 83, 84 और 87, यानी अनुशंधानकर्ता की गवाही पर बहुत ज़्यादा भरोसा किया है, यह कहते हुए कि प्रति परिक्षण में वे अपनी बात पर कायम रहे और धारा 161 के तहत गवाहों द्वारा दिए गए बयानों की पुष्टि पर भरोसा किया गया, जो गवाहों ने विचारण के दौरान खुद बॉक्स में नहीं कहे थे। हम यह देखे बिना नहीं रह सकते कि, हालांकि अनुशंधानकर्ता की गवाही पर भरोसा करने की बात कही गई है, लेकिन असल में यह अनुशंधानकर्ता द्वारा बताए गए धारा 161 के बयानों पर भरोसा करना होगा, जो सरासर गलत है। उच्च न्यायालय पैराग्राफ 85 में पी.डब्लू. 87 द्वारा जांचे गए गवाहों द्वारा दिए गए बयानों की पुष्टि की बात करता है और दर्ज करता है कि हालांकि गवाहों ने इन्हें नकार दिया था, लेकिन पी.डब्लू.87 के प्रति परिक्षण को पढ़ने से पता चलता है कि उसे गलत साबित नहीं किया गया था और क्रॉस में उससे किए गए सुझावों को उसने नकार दिया था। आरोपी के तथाकथित स्वैच्छिक बयानों और पी.डब्लू.87 द्वारा दर्ज किए गए धारा 161 के तहत दिए गए बयानों पर, ऊपर बताए गए फैसलों के आधार पर, भरोसा नहीं किया जा सकता।

18. जैसा कि हमने देखा, उच्च न्यायालय ने पुलिस अधिकारियों की न्यायालय में गवाही के बारे में जो फैसले दिए थे कि उन पर अविश्वास नहीं किया जा सकता, वे खास तौर पर धारा 27 के तहत की गई बरामदगी और गैर-कानूनी सामान की ज़ब्ती के संबंध में थे। ज़ब्ती अक्सर अचानक रोककर या मिली जानकारी के आधार पर होती है, लेकिन इस सिद्धांत को धारा 161 के तहत जांच के दौरान गवाहों द्वारा दिए गए बयानों की पुष्टि पर लागू नहीं किया जा सकता; अगर वे विचारण के दौरान इसकी पुष्टि नहीं करते हैं। सिर्फ़ इसलिए कि अनुशंधानकर्ता ने ऐसे बयान दिए जाने के बारे में कहा है, इसे पूरी तरह सच नहीं माना जा सकता। न ही आरोपी के स्वेच्छा से दिए गए बयानों पर भरोसा किया जा सकता है, सिवाय उस हद तक जहां जानकारी के आधार पर किसी तथ्य का पता चलता है, जो एक मज़बूत फंसाने वाला सबूत होगा, लेकिन तभी जब अपराध से उसका कोई लिंक साबित हो।
19. इस संदर्भ में, हमें पैराग्राफ 86 पर भी खास तौर पर ध्यान देना होगा, जहाँ पी.डब्लू.87 के कुछ जवाबों पर चर्चा की गई थी ताकि उसकी गवाही को और ज़्यादा विश्वसनीय बनाया जा सके; जो असल में अभियोजन पक्ष के मामले के खिलाफ जाता है। टेस्ट पहचान परेड का कोई नतीजा नहीं निकला था, जिसे अभियोजन पक्ष के खिलाफ कोई तर्क नहीं माना गया। हम पूरी तरह सहमत हैं, क्योंकि अगर जाँच के स्टेज पर पहचान हो भी जाती है, तो पहले के फैसलों के अनुसार, यह सिर्फ़ जाँच में मदद करता है और सज़ा का आधार नहीं बन सकता, जब तक कि आरोपी की पहचान विचारण के समय न्यायालय में नहीं हो जाती, जो इस मामले में नहीं हुआ है। पी.डब्लू.87 ने यह बात मानी कि जब उसने मृतक के परिवार वालों से पूछताछ की, तो किसी ने भी मृतक और ए.1 के बीच मौजूदा मतभेदों के बारे में बात नहीं की। इस बात को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि, उसी तरह के एक और सुझाव पर, पी.डब्लू.87 ने इसे साफ मना कर दिया और ऐसा इसलिए था क्योंकि उसकी जाँच में ए.1 की संलिप्तता सामने आई थी; यह बिना किसी कानूनी आधार के एक मनगढ़ंत नतीजा था। जाँच में अनुशंधानकर्ता को जो भी पता चला है, उसे न्यायालय के सामने मौखिक गवाही या दूसरे सबूतों से साफ तौर पर साबित करना होगा, ऐसा न होने पर न्यायालय अनुशंधानकर्ता की इस सोच के आधार पर सज़ा नहीं दे सकता कि जाँच में कोई खास बात सामने आई थी।

20. ए.5 और ए.6 के कपड़ों के बारे में उसके बयानों में जो गड़बड़ी थी, उसे समझाने की कोशिश की गई। हम इस गड़बड़ी पर ज़्यादा ध्यान नहीं देंगे क्योंकि धारा 27 के तहत हुई रिकवरी से कुछ भी साबित नहीं होता। रिकवरी ए.3 के कबूलनामे के बयान पर हुई थी, न कि ए.5 या ए.6 के। इसके अलावा, पी.डब्लू. 87 द्वारा बताए गए ए.3 के बयान को प्रदर्श पी.113 के रूप में मार्क किया गया है, जो इस प्रकार है: “इस मर्डर में इस्तेमाल किए गए चाकुओं को अजजवरा-अडंगया-माविनपल्ला में रेणुका प्रसाद के फार्महाउस की पहली मंज़िल के आखिरी कमरे में एक बोरी में रखा गया है। अपराध के दौरान शरण और भवानी शंकर ने जो खून से सने कपड़े पहने थे और अपराध के दौरान हीरो होंडा स्लेंडर बाइक पर लगी कन्नड़ नंबर प्लेट, उन्हें पानी के पंप के पास एक प्लास्टिक कवर में रखा गया है; और अगर आप मेरे साथ आएं, तो मैं आपको वह दिखा दूंगा।” (एस.आई.सी.) मर्डर और अपराध का ज़िक्र पूरी तरह से हटा देना चाहिए और जो तथ्य सामने आया है, वह सिर्फ हथियारों और कपड़ों को छिपाना है, जिसकी जानकारी ए.3 ने दी थी, जो अभियोजन पक्ष के अनुसार भी, मर्डर के मुख्य अपराध में शामिल नहीं था। इसके अलावा, रिकवरी के लिए महज़र रिकॉर्ड करते समय, बरामद शर्ट और पैट को ए.5 का और एक शर्ट और जींस को ए.6 का बताया गया था। यह सत्यापित करने के लिए कुछ नहीं किया गया कि एम्. ओ.12 – एम्.ओ.15 कपड़े ए.5 और ए.6 को फिट होंगे या नहीं। पी.डब्लू.87 ने असल में यह माना कि उसने ए.5 और ए.6 को वे कपड़े पहनने के लिए नहीं कहा था और न ही किसी दर्जी से यह सत्यापित किया गया कि बरामद कपड़े ए.5 और ए.6 को फिट होंगे या नहीं। ए.3 द्वारा ए.5 और ए.6 द्वारा ए.3 को हथियार और कपड़े सौंपने के बारे में कोई बयान नहीं दिया गया है, जिसे किसी भी स्थिति में स्वतंत्र रूप से साबित करना होगा। रिकवरी के समय ए.5 और ए.6 के कपड़ों की पहचान भी स्वीकार्य नहीं है। धारा 27 के तहत सिर्फ कपड़ों की बरामदगी, वह भी एक कथित साज़िशकर्ता के कबूलनामे के बयान के ज़रिए, ए.5 या ए.6 को दोषी नहीं ठहराती, जिन पर मृतक को मारने का आरोप था। खास बात यह है कि जिस जगह या फार्म से बरामदगी की गई थी, वह ए.1 का था, यह साबित नहीं हुआ।
21. जहां तक अपराध की बात है, चश्मदीद गवाह पी.डब्लू.8 और जो लोग घटना के तुरंत बाद मौके पर पहुंचे, पी.डब्लू.1 और पी.डब्लू.9, उन्होंने माना कि उन्होंने आरोपी को नहीं पहचाना। घटना के समय पी.डब्लू.8 एक 15 साल का लड़का था, खंडपीठ का मानना था कि यह

स्वाभाविक था कि वह आरोपी को पहचान नहीं पाया। उसके बयान से यह भी पता चला कि पुलिस ने ही उसे बताया था कि ए.5 और ए.6 ने हत्या की है। जहां तक पी.डब्ल्यू.1 की बात है, पी.डब्ल्यू.9 के सबूतों को देखते हुए, यह पाया गया कि पी.डब्ल्यू.1 ने न्यायालय के सामने जानबूझकर झूठ बोला था; जिससे न्यायालय उसके धारा 161 के बयान पर विचार नहीं कर सकता। पी.डब्ल्यू.9 ने भी आरोपी को नहीं पहचाना और उसने सिर्फ एक व्यक्ति को भागते हुए देखने की बात कही। जाहिर है, क्योंकि पी.डब्ल्यू.8, पी.डब्ल्यू.1 और 9 के सबूतों पर ए.5 और ए.6 पर अपराध साबित करने के लिए भरोसा नहीं किया जा सकता था, इसलिए खंडपीठ ने विचारण में स्थापित करने की कोशिश की गई परिस्थितियों को देखा; जैसे मकसद, साजिश, तैयारी, आपत्तिजनक सामान की बरामदगी और एफ.एस.एल. प्रतिवेदन। चश्मदीद गवाहों की गवाही को छोड़ने से पहले, हम यह देखे बिना नहीं रह सकते कि अभियोजन पक्ष ने कभी भी पी.डब्ल्यू.8 को एम्.ओ.12 से एम्.ओ.15 के रूप में बरामद कपड़ों से सामना कराने की कोशिश नहीं की, जिनके बारे में कहा गया था कि अपराध के समय ए.5 और ए.6 ने उन्हें पहना था। न ही यह पी.डब्ल्यू.9 को दिखाया गया, जिसने कम से कम घटनास्थल से एक व्यक्ति को भागते हुए देखने की बात कही थी।

22. मकसद के सवाल पर, खंडपीठ ने पी.डब्ल्यू.4, जो ए.1 का भाई है, पी.डब्ल्यू.10, जो मृतक की पत्नी है, और पी.डब्ल्यू. 6, जो पी.डब्ल्यू.4 की पत्नी है, पी.डब्ल्यू.7, जो उनका बेटा है, और पी.डब्ल्यू.s 11 से 13, जो ए.1 और पी.डब्ल्यू.4 के रिश्तेदार हैं, सभी के सबूतों की जांच की, जो सभी मुकर गए थे। पी.डब्ल्यू.4 और ए.1 के संस्थानों के कर्मचारियों ने भी भाइयों के बीच दुश्मनी और ए.1 की मृतक के प्रति कथित बुरी भावना के बारे में अपने पिछले बयानों से इनकार कर दिया। पी.डब्ल्यू.4 ने उस चिट्ठी से इनकार किया जिसे न्यायालय में एम.ओ.40 के तौर पर पेश किया गया था। हालांकि, खंडपीठ ने एम.ओ.40 और उसकी बातों पर इस आधार पर भरोसा किया कि पी.डब्ल्यू.83 ने कहा था कि पी.डब्ल्यू.4 पुलिस स्टेशन आया था और 14 पेज की चिट्ठी की ज़ेरॉक्स कॉपी सौंपी थी। हम खंडपीठ के तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते, खासकर इसलिए क्योंकि जब पी.डब्ल्यू.4 से पूछताछ की गई तो उसे एम.ओ.40 दिखाया गया और उसने ऐसी कोई चिट्ठी लिखने से इनकार कर दिया। इसलिए, चिट्ठी साबित नहीं हुई, हालांकि अनुसंधानकर्ता के ज़रिए उसे मार्क किया गया था। सिर्फ इसलिए कि पी.डब्ल्यू.83, जो

- अनुसंधानकर्ता है, ने कहा कि जांच के समय पी.डब्लू.4 ने उसे यह चिट्ठी सौंपी थी, यह एम.ओ.40 पर भरोसा करने या ए.1 और पी.डब्लू.4 के बीच दुश्मनी और ए.1 द्वारा मृतक को धमकी देने की बात जानने के लिए उसकी बातों को देखने का कारण नहीं हो सकता।
23. उच्च न्यायालय ने पी.डब्लू.10 की गवाही या धारा 161 के बयान में दिए गए उनके बयानों पर इस आधार पर भरोसा किया कि पत्नी को हत्या के पीछे के कारणों के बारे में ज़रूर पता होगा। अगर वह कहती है कि उसे कुछ नहीं पता, तो उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता, यह निष्कर्ष था। पी.डब्लू.10 के इस बयान पर कि उसे पता था कि ए.1 ने मृतक का अपमान किया था और उसे धमकियाँ दी थीं; पी.डब्लू.10 से इस बारे में पूछा गया लेकिन उसने मना कर दिया, इस पर भरोसा किया गया, यह पाते हुए कि पी.डब्लू. 83 ने इसकी पुष्टि की थी। यह भी पाया गया कि पी.डब्लू.4 अपने पहले के धारा 161 के बयान से मुकर गया था क्योंकि पी.डब्लू.4 की बहन और ए.1 ने उनके खिलाफ एक मुकदमा दायर किया था जिसका वे मिलकर बचाव कर रहे थे; यह सिर्फ एक अनुमान था कि पी.डब्लू.4 के धारा 161 के बयानों पर बहुत ज़्यादा भरोसा किया जाए। हमारे अनुसार, जहाँ तक ए.1 का मृतक के प्रति दुश्मनी का मकसद था, संस्थानों के मामलों और संपत्ति के बँटवारे में दखल देने के कारण, वह साबित नहीं होता है। पी.डब्लू.4 ने कॉलेज में मेस चलाने के संबंध में भाइयों के बीच कुछ मतभेदों को ही स्वीकार किया और जहाँ तक बताए गए खास विवाद की बात है, उसमें मृतक का कोई ज़िक्र नहीं था। हमें मकसद साबित होने का कोई कारण नहीं दिखता।
24. उच्च न्यायालय ने जिस अगले पहलू पर विचार किया, वह था साजिश और जुर्म की तैयारी। मोहम्मद खालिद बनाम स्टेट ऑफ़ डब्लू.बी. पर सही भरोसा किया गया, जिसमें यह राय दी गई थी कि साजिशें खुले में नहीं रची जातीं और जब छिपकर की जाती हैं, तो साजिश से जुड़ा सीधा सबूत पेश करना बहुत मुश्किल होता है और न्यायालय को हालात के सबूतों पर भरोसा करना होगा, जो आरोपी के कामों और गलतियों से साबित हुए अलग-अलग हालात से निकाले गए नतीजों पर भी आधारित होने चाहिए। खंडपीठ ने साजिश साबित करने के लिए पेश किए गए अलग-अलग गवाहों का ज़िक्र करते हुए सबसे पहले पी.डब्लू.71 के सबूत देखे, जो एक संस्था की निदेशक थीं और ए 1 की पत्नी भी थीं और पी.डब्लू.72, जो उसी इंस्टीट्यूशन में एक कर्मचारी थीं। पी.डब्लू.71 ने हालांकि न्यायालय के सामने पेश किए गए अलग-अलग

डॉक्यूमेंट्स से इनकार किया, खंडपीठ ने माना कि उसकी गवाही जानबूझकर झूठ थी, जिसका मकसद अपने पति को बचाना था। पी.डब्लू.72 ने डेंटल कॉलेज के इंचार्ज प्रिंसिपल के तौर पर ए 2 का जारी किया गया सैलरी सर्टिफिकेट दिखाया था। ऊपर दिए गए सबूतों पर भरोसा किया गया ताकि यह पता चल सके कि ए 1 की ए 2 से ए 4 तक करीबी जान-पहचान थी, ए 2 बाद के तीन लोगों का एम्प्लॉयर था। जहां तक साज़िश रची गई थी, न्यायालय ने पी.डब्लू.87 के सामने ए 3, ए 5 और ए 6 के अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों पर भरोसा किया और महबूब अली बनाम राजस्थान राज्य पर भरोसा किया। ए 1 के अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों के ज़रिए बताई गई जगहों के बारे में पी.डब्लू.87 की गवाही पर, जहां बातचीत हुई थी और पैसे का लेन-देन हुआ था, खंडपीठ ने भरोसा किया। इसके अलावा, पी.डब्लू.61 से पी.डब्लू.64 के धारा 161 के बयानों पर भी भरोसा किया गया, जिन्होंने न्यायालय के सामने अपनी गवाही में ए 3 को 28.04.2011 को एक होटल में ए 5 और ए 6 के साथ देखे जाने के बारे में अपने बयानों से मुकर गए थे। जहां तक तैयारी की बात है, क्योंकि इसे साबित करने के लिए जिन गवाहों से पूछताछ की गई, वे भी अपने बयान से मुकर गए, इसलिए पुलिस अधिकारियों के सबूतों को गिना गया और अनुसंधानकर्ता द्वारा बताई गई कहानी पर विस्तार से चर्चा की गई, जो असल में पुलिस के सामने अलग-अलग गवाहों द्वारा दिए गए धारा 161 के बयानों पर आधारित है।

25. काली राम बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य में आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 162 पर विचार किया गया था ताकि यह माना जा सके कि प्रावधान यह स्पष्ट करता है कि 'जांच के दौरान किसी व्यक्ति द्वारा पुलिस अधिकारी को दिया गया बयान किसी गवाह का खंडन करने के उद्देश्य के अलावा किसी भी उद्देश्य के लिए इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, जैसा कि उप-धारा (1) के प्रावधान में उल्लिखित है या उप-धारा (2) में उल्लिखित उद्देश्यों के लिए है' (इस प्रकार पैरा-17)। आर. शाजी बनाम केरल राज्य में आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 के तहत धारा 162 के संदर्भ में उक्त सिद्धांत को दोहराया गया था। इस न्यायालय ने माना कि 'धारा 161 आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत बयानों का प्रयोग केवल विरोधाभास के उद्देश्य से किया जा सकता है और धारा 164 आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत बयानों का प्रयोग पुष्टि और विरोधाभास दोनों के लिए किया जा सकता है' (इस प्रकार पैरा-25)। आगे यह भी

माना गया कि हालांकि धारा 164 के तहत रिकॉर्ड किए गए गवाह के बयान का मकसद दो तरह का होता है, लेकिन ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं है कि अगर किसी गवाह का बयान दंडाधिकारी के सामने धारा 164 के तहत दर्ज किया गया है, तो न्यायालय में ऐसे गवाह के सबूत को खारिज कर दिया जाना चाहिए। राजेंद्र सिंह बनाम स्टेट ऑफ़ उत्तर प्रदेश एक ऐसा केस था जिसमें उच्च न्यायालय ने, जैसा कि इस केस में है, अनुसंधानकर्ता द्वारा धारा 161 अपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत रिकॉर्ड किए गए छह गवाहों के बयानों पर भरोसा किया, यह नतीजा निकालने के लिए कि प्रतिवादी अपराध की जगह पर मौजूद नहीं हो सकता था, क्योंकि वह इलाहाबाद में नगर निगम की मीटिंग में मौजूद था। यह साफ तौर पर माना गया कि 'धारा 161 अपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत एक बयान सबूत का एक अहम हिस्सा नहीं है। अपराधिक प्रक्रिया संहिता के धारा 162 के सब-धारा (1) के नियम को देखते हुए, बयान का इस्तेमाल सिर्फ़ नियम में बताए गए तरीके से, इसे बनाने वाले की बात का खंडन करने के सीमित मकसद के लिए किया जा सकता है (एस आई सी पैरा-6)। यह पाया गया कि उच्च न्यायालय ने एक आरोपी के एलिबी पर फैसला दर्ज करने में पूरी तरह से नामंजूर सबूतों पर भरोसा करके कानून की एक साफ़ गलती की।

26. इन्वेस्टिंग ऑफिसर्स के मकसद, साज़िश और तैयारी के बारे में दिए गए बयान अभियोजन की कहानी के तौर पर सामने आते हैं, जैसा कि अनुसंधान के दौरान पुलिस द्वारा पूछताछ किए गए अलग-अलग गवाहों के धारा 161 के बयानों से पता चलता है; ये बयान दंड प्रक्रिया संहिता के धारा 162 के तहत पूरी तरह से नामंजूर हैं। सिर्फ़ इसलिए कि अनुसंधानकर्ता ने अनुसंधान के दौरान गवाहों द्वारा दिए गए ऐसे बयानों के बारे में कहा, इससे उन्हें कोई भरोसा नहीं मिलता, जिससे वे माने जा सकें, जब तक कि गवाहों ने खुद ऐसे मकसद या कामों या चूक या ऐसे उदाहरणों के बारे में न कहा हो जिनसे साज़िश का अंदाज़ा लगाया जा सके और साथ ही तैयारी का भी, जो बिना किसी शक के साबित हो। हम न तो मकसद, न साज़िश या तैयारी या यहाँ तक कि खुद जुर्म को न्यायालय में, विचारण में न्यायालय के सामने पूछताछ किए गए गवाहों के ज़रिए साबित होते हुए पा सके। गवाह मुकर गए थे, और इसके कारण वही जानते हैं। गवाहों के मुकरने पर यही अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि या तो उन्हें किसी अनजान वजह से मनाया गया है या धारा 161 के तहत दिए गए बयानों से मुकरने के लिए मजबूर किया

गया है या उन्होंने पुलिस अधिकारियों के सामने ऐसे बयान नहीं दिए थे। सिर्फ इसलिए कि कहानी अनुसंधानकर्ता के मुँह से निकली है, उस पर यकीन नहीं किया जा सकता और उसे दंड प्रक्रिया संहिता के धारा 162 के तहत धारा 161 के बयानों से ज़्यादा कानूनी मान्यता नहीं दी जा सकती।

27. उच्च न्यायालय ने महबूब अली पर भरोसा करके साज़िश का पता लगाने के लिए, उन जगहों के बारे में अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों पर भी भरोसा किया है जहाँ बातचीत हुई थी और पैसे ट्रांसफर किए गए थे। यह एक ऐसा मामला था जिसमें नकली नोटों के कारोबार के आरोप में गिरफ्तार आरोपियों के अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों के आधार पर, किंगपिन को गिरफ्तार किया गया था, जिसके पास से नकली नोट बरामद किए गए थे। मौजूदा मामले में, अगर आरोपी ने उन अलग-अलग जगहों की ओर इशारा नहीं किया होता जहाँ कथित तौर पर बातचीत हुई थी और पैसे का लेन-देन हुआ था, तो उस जगह से कोई तथ्य नहीं मिला, या कोई छिपी हुई चीज़ बरामद नहीं हुई जिससे किसी गलत तथ्य का अनुमान लगाया जा सके।
28. अब हम उन ज़ब्ती और रिकवरी पर आते हैं जिन पर न्यायालय ने भरोसा किया, जैसा कि अनुसंधानकर्ता ने कहा था क्योंकि महाज़रों को साबित करने वाले स्वतंत्र गवाह अपने बयान से पलट गए थे। जो ज़रूरी रिकवरी हुई, उनमें ए 2 से ए 6 के पास से कैश, वे कपड़े जो ए 5 और ए 6 ने क्राइम करते समय पहने थे, वे हथियार जिनसे क्राइम किया गया था और वे गाड़ियाँ जिनमें भागा गया था, शामिल थीं। जहाँ तक गाड़ियों की बात है, तो यहाँ तक कि चश्मदीद गवाह, पी डब्लू 1 या पी डब्लू 9, जो क्राइम होने के तुरंत बाद क्राइम सीन पर थे, ने भी ए 5 और ए 6 के मोटर बाइक पर भागने की बात नहीं कही। चश्मदीद गवाह पी डब्लू 8 का अपने FIS में खास आरोप यह था कि जब वह और उसके पिता घटनास्थल पर टहल रहे थे, तो अचानक दो लोग झाड़ियों से निकले, उसके पिता को मारकर मार डाला और भाग गए, ज़ाहिर है पैदल। यह बयान पी डब्लू 1 और पी डब्लू 9 दोनों ने दिया था, जिनमें से पी डब्लू 1 पूरी तरह से पलट गया, और दूसरे ने किसी मोटर बाइक के बारे में कुछ नहीं कहा। इसलिए मोटर बाइक की रिकवरी का कोई मतलब नहीं है। कहा जाता है कि पिकअप वैन का इस्तेमाल ठिकाने तक पहुंचने के लिए किया गया था, जो एक खेत बताया जा रहा है। पिकअप वैन से कोई ऐसा सामान नहीं मिला जिससे इस गाड़ी का क्राइम से कोई कनेक्शन हो।

29. जहां तक कपड़ों की बात है, हम यह देखे बिना नहीं रह सकते कि एनालिसिस प्रतिवेदन से पता चलता है कि बरामद कपड़ों पर खून के धब्बे थे, जिनका एनालिसिस करने पर पता चला कि वे 'ओ' ग्रुप के इंसानी खून के थे, और शव परीक्षण पत्र से पता चलता है कि मरने वाला 'ओ+' ग्रुप का था। यह बात आम है कि सिर्फ इसी बात से आरोपी को फंसाया नहीं जा सकता क्योंकि बरामद चीजों का आरोपी और क्राइम से साफ सम्बन्ध होना चाहिए। खासकर इस मामले में, जहां कपड़े ए 5 और ए 6 के स्वीकारोक्ति बयान पर बरामद नहीं हुए थे, जिन पर क्राइम करने का आरोप है। हथियार, और कपड़े, ए 3 के स्वीकारोक्ति बयान पर खेत से बरामद हुए थे। हालांकि, उच्च न्यायालय ने पाया कि ए 5 और ए 6 ने कपड़े और हथियार ए 3 को छिपाने के लिए दिए थे, यह अभियोजन को साबित करना होगा और यह आरोपी के तथाकथित अपनी मर्जी से दिए गए बयानों पर आधारित नहीं हो सकता। ए 3, ए 5 और ए 6 को एक ही दिन गिरफ्तार किया गया था और उन्हें एक साथ ले जाया गया था, कथित तौर पर ए 3 के स्वीकारोक्ति बयान के आधार पर। ए 5 और ए ने रिकवरी के समय पुलिस अधिकारियों के सामने जो पहचान बताई थी, वह भी धारा 27 के तहत किया गया स्वीकारोक्ति नहीं है और इस पर साक्ष्य अधिनियम के धारा 25 और 26 लागू होंगे।
30. खंडपीठ ने धारा 27 के तहत स्वीकारोक्ति बयान लाने के लिए, साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 के तहत, कबूल करने वालों के अलावा दूसरे आरोपियों को दोषी ठहराने के लिए, अथप्पा गौडन, इन रे, पर बहुत ज़्यादा भरोसा किया था। उसमें स्वीकारोक्ति में खास तौर पर पुलिस हिरासत में व्यक्ति द्वारा हत्या की बात कही गई थी और दो बोतलों, एक रस्सी और एक कपड़े का गैग पेश करने की भी पेशकश की गई थी, जिसका इस्तेमाल हत्या करने के लिए किया गया था। आरोपी द्वारा बताए जाने पर ये चीज़ें बरामद की गईं। न्यायालय ने राय दी कि पेश की गई चीज़ें, प्रकृति में अपराध साबित करने वाली नहीं थीं, इसलिए उनका पेश करना तब तक बेमतलब होगा जब तक वे हत्या से जुड़ी न हों; जब कन्फेशन के अलावा, चीज़ों को हत्या से जोड़ने के लिए कोई सबूत न हो। इसलिए यह माना गया कि कोई भी जानकारी जो मिली हुई चीज़ को आरोपित अपराध से जोड़ती है, वह धारा 27 के तहत स्वीकार्य है। पुलुकुरी कोट्टाया ने कहा:

“उनके इस तर्क को लॉर्डशिप स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। आरोपी द्वारा दी गई जानकारी के आधार पर पता चले तथ्य को एक ज़रूरी तथ्य साबित करने में कितनी भी बड़ी मुश्किल हो, धारा 27 में ऐसी कोई बात पढ़ने का कोई औचित्य नहीं है जो वहाँ है ही नहीं, और धारा 26 द्वारा रोके गए कबूलनामे को सबूत के तौर पर स्वीकार करना। उन मामलों को छोड़कर जिनमें किसी चीज़ का कब्ज़ा या छिपाना आरोपित अपराध का सार बनता है, ऐसा बहुत कम होता है कि किसी तथ्य की खोज से जुड़ी जानकारी सरकारी वकील के मामले की नींव बने। यह सबूत की चेन में सिर्फ़ एक कड़ी है, और बाकी कड़ियाँ कानून द्वारा इजाज़त तरीके से बनाई जानी चाहिए।”

(पैराग्राफ 10)

31. नरेश चंद्र दास बनाम किंग-एम्परर मामले में, एक अलग फैसले में कहा गया कि किसी तथ्य का पता लगाने वाले बहुत सारे बयान स्वीकार्य हैं, लेकिन फिर भी, पता लगाए गए तथ्य को ज़रूरी बनाने के लिए, अभियोजन को अलग सबूत देने होंगे और इस मकसद के लिए स्वीकारोक्ति बयान का इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह साक्ष्य अधिनियम के धारा 25 और धारा 26 का उल्लंघन होगा। यह माना गया कि “अगर अभियोजन, पता लगाए गए तथ्य को अपराध से जोड़ने वाला कोई और सबूत नहीं ला सकता है, तो अभियोजन को हार माननी पड़ सकती है”। (इस तरह से)
32. पुलुकुरी कोट्टाया ने धारा 27 के असर पर विचार करते हुए कहा कि धारा 27 के तहत खुलासा किसी चीज़ को छिपाने के बारे में है, न कि खुद चीज़ के बारे में। बरामद की गई चीज़ को आरोपी पर दोष लगाने के लिए जुर्म से जोड़ा जाना चाहिए, जिसने छिपाने की जानकारी देकर बरामदगी में मदद की थी। धारा 27 के तहत कबूलनामा, अगर जुर्म की ही बात कर रहा है, तो वह हिस्सा स्वीकार्य सबूत नहीं है, क्योंकि यह धारा 25 और 26 का उल्लंघन करेगा। हम पैराग्राफ 9 को उद्धृत करते हैं जो धारा 27 के असर और प्रभाव से संबंधित है:

“धारा 27, जिसे कलात्मक रूप से नहीं लिखा गया है, पिछले धारा द्वारा लगाई गई रोक के लिए एक छूट देता है, और पुलिस हिरासत में किसी व्यक्ति द्वारा दिए गए कुछ बयानों को साबित करने में मदद करता है। इस धारा को लागू करने के लिए ज़रूरी शर्त यह है कि पुलिस अधिकारी की कस्टडी में किसी अपराध के आरोपी व्यक्ति से

मिली जानकारी के नतीजे में किसी तथ्य का पता चलने पर, गवाही दी जानी चाहिए, और उसके बाद उतनी ही जानकारी साबित की जा सकती है जो उस तथ्य से साफ़ तौर पर जुड़ी हो जिसका पता चला है। यह धारा इस नज़रिए पर आधारित लगता है कि अगर दी गई जानकारी के नतीजे में कोई तथ्य सच में पता चलता है, तो इससे कुछ गारंटी मिलती है कि जानकारी सच थी, और इसलिए इसे सबूत के तौर पर सुरक्षित रूप से देने की इजाज़त दी जा सकती है; लेकिन साफ़ है कि जानकारी कितनी मानी जाएगी, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि वह तथ्य किस तरह का है जिससे उस जानकारी को जोड़ा जाना है। आम तौर पर यह धारा तब लागू होता है जब पुलिस कस्टडी में कोई व्यक्ति किसी छिपी हुई जगह से कोई चीज़, जैसे कि कोई लाश, कोई हथियार, या गहने, लाता है, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह उस अपराध से जुड़ी है जिसका आरोप सूचना देने वाले पर है। श्री. क्राउन की तरफ से मेगॉ ने तर्क दिया है कि ऐसे मामले में "खोजा गया तथ्य" वह फिजिकल चीज़ है जो पेश की गई है, और कोई भी जानकारी जो उस चीज़ से खास तौर पर जुड़ी हो, उसे साबित किया जा सकता है। इस नज़रिए से, किसी व्यक्ति द्वारा दी गई यह जानकारी कि पेश की गई बाँडी उस व्यक्ति की है जिसकी उसने हत्या की है, कि पेश किया गया हथियार वह है जिसका इस्तेमाल उसने हत्या करने में किया था, या कि पेश किए गए गहने डकैती में चुराए गए थे, ये सभी बातें मानी जाएंगी। अगर धारा 27 का यही असर होता, तो पिछली दो धाराओं द्वारा पुलिस के सामने या पुलिस हिरासत में मौजूद लोगों द्वारा किए गए कबूलनामे पर लगाई गई रोक का कोई खास मतलब नहीं बचता। वह रोक शायद विधान मंडल के इस डर से लगाई गई थी कि पुलिस के असर में कोई व्यक्ति बेवजह दबाव डालकर कबूल करने के लिए मजबूर हो सकता है। लेकिन अगर रोक हटाने के लिए बस यह ज़रूरी है कि कबूलनामे में बाद में पेश की गई चीज़ से जुड़ी जानकारी शामिल की जाए, तो यह मानना सही लगता है कि पुलिस की समझाने की ताकत मौके के हिसाब से बराबर साबित होगी, और असल में रोक अपना असर खो देगी। बनाने के आम सिद्धांतों के हिसाब से उनका लॉर्डशिप का मानना है कि धारा 26 में धारा 27 द्वारा जोड़ा गया नियम, धारा के सार को खत्म नहीं करता है। उनके

लॉर्डशिप के विचार में, धारा के अंदर "खोजे गए तथ्य" को पेश की गई चीज़ के बराबर मानना गलत है; खोजे गए तथ्य में वह जगह शामिल है जहाँ से चीज़ पेश की गई है और आरोपी को इस बारे में पता है, और दी गई जानकारी इस तथ्य से अलग से जुड़ी होनी चाहिए। पेश की गई चीज़ के पिछले इस्तेमाल, या पिछले इतिहास के बारे में जानकारी, उस जगह पर उसकी खोज से संबंधित नहीं है जहाँ वह मिली है। हिरासत में लिए गए व्यक्ति द्वारा दी गई जानकारी कि "मैं अपने घर की छत में छिपा हुआ चाकू पेश करूँगा" से चाकू की खोज नहीं होती है; चाकू कई साल पहले खोजे गए थे। इससे इस बात का पता चलता है कि सूचना देने वाले के घर में उसकी जानकारी के अनुसार एक चाकू छिपा हुआ है; और अगर यह साबित हो जाता है कि अपराध करने में चाकू का इस्तेमाल किया गया था, तो खोजी गई बात बहुत ज़रूरी है। लेकिन अगर बयान में "जिससे मैंने ए को चाकू मारा" शब्द जोड़ दिए जाएँ, तो ये शब्द अमान्य हैं क्योंकि वे मुखबिर के घर में चाकू मिलने से संबंधित नहीं हैं।" (हमने ज़ोर देने के लिए अंडरलाइन किया है)

33. स्टेट (नेशनल कैपिटल टेरिटोरी ऑफ़ दिल्ली) बनाम नवजोत संधू ने केस लॉ के इतिहास को खंगाला और पुलुकुरी कोट्टाया को एक ऐसा लोकस क्लासिकस बताया जिसने धारा 27 के मतलब को लेकर चल रहे ज़्यादातर विवाद को खत्म कर दिया। जानकार जजों के मुताबिक, पहली ज़रूरत यह थी कि जांच अधिकारी को यह बयान देना चाहिए कि उसने पुलिस हिरासत में एक आरोपी व्यक्ति से मिली जानकारी के आधार पर एक ऐसा तथ्य खोजा है, जो पुलिस अधिकारी की जानकारी में नहीं था। जानकारी या खुलासे में किसी भी तरह की ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिए और सिर्फ़ उतनी ही जानकारी साबित की जा सकती है जो उससे मिले तथ्य से साफ़ तौर पर जुड़ी हो, और इससे ज़्यादा कुछ नहीं। धारा साफ़ तौर पर बताता है कि स्वीकारोक्ति मना नहीं है, लेकिन स्वीकारोक्ति वाला हिस्सा जो माना जा सकता है, वह सिर्फ़ ऐसी जानकारी या उसका हिस्सा है, जो दी गई जानकारी के ज़रिए खोजे गए तथ्यों से साफ़ तौर पर जुड़ा हो। इस नियम के पीछे यह तर्क दिया गया था कि, अगर दी गई जानकारी से कोई बात पता चलती है, तो यह कुछ गारंटी देता है कि वह जानकारी सच है और इसलिए, उसे आरोपी के खिलाफ सबूत के तौर पर सुरक्षित रूप से स्वीकार किया जा सकता है।

34. एच.पी. एडमिन बनाम ओम प्रकाश मामले में, एक पत्थर के नीचे से एक खंजर बरामद हुआ था, जब पुलिस को छिपाने की जानकारी दी गई और आरोपी ने उस व्यक्ति की ओर भी इशारा किया जिससे उसने खंजर खरीदा था। जबकि पहली बात धारा 27 के तहत स्वीकार्य थी, दूसरी बात अस्वीकार्य मानी गई। एक चाकू को छिपाना, जिसके बारे में पुलिस को पता नहीं था, जब दी गई जानकारी से पता चलता है, तो छिपाने की जानकारी भरोसेमंद होती है। हालांकि, अगर जिस व्यक्ति से चाकू खरीदा गया है, उसकी ओर इशारा किया जाता है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उसे खोजा गया है, अगर आरोपी द्वारा दी गई जानकारी के कारण उससे कुछ नहीं मिलता या बरामद नहीं होता है।
35. राज्य ने अपने लिखित कथन में प्रकटीकरण कथन की स्वीकार्यता के बारे में अपनी बात को मज़बूत करने के लिए स्टेट ऑफ़ महाराष्ट्र बनाम दामू रूमी बोरा दत्ता बनाम स्टेट ऑफ़ असम, राजा बनाम स्टेट ऑफ़ हरियाणा का हवाला दिया है। दामू 16 में, डेड बॉडी एक जगह से मिली थी, जिसे दूसरे और तीसरे आरोपी अपनी मोटरसाइकिल में ले गए और नहर में फेंक दिया। चूंकि शव को खुलासा होने से पहले ही बरामद कर लिया गया था, इसलिए बयान को धारा 27 के तहत स्वीकार्यता पाया गया। लेकिन मौके से कांच का एक टूटा हुआ टुकड़ा मिला, जैसा कि ए 3 ने बताया, जो ए 2 के घर से मिली मोटरसाइकिल की टूटी टेल लैंप में ठीक से फिट हो गया। इससे आरोपी के स्वीकारोक्ति बयान को भरोसा मिला, भले ही डेड बॉडी जानकारी से पहले मिली थी। नवजोत संधू (ऊपर) ने ओम प्रकाश और दामू की बात को सही ठहराया और कहा कि “किसी तथ्य की खोज से किसी भौतिक वस्तु से जुड़े शुद्ध और सरल मानसिक तथ्य या मन की स्थिति को नहीं समझा जा सकता, जो भौतिक वस्तु की रिकवरी से अलग हो।” (इस तरह से)
36. इस मामले में, हमें पांडुरंग कालू पाटिल बनाम महाराष्ट्र राज्य मामले पर ध्यान देना चाहिए, जिसमें पुलुकुरी कोट्टाया को फ़ॉलो किया गया और यह दोहराया गया कि जो बात पता चली है, वह बनाई गई चीज़ के बराबर नहीं है। यह माना गया कि जुर्म की चीज़ को छिपाने की जानकारी से चीज़ का पता नहीं चलता, बल्कि इससे यह पता चलता है कि चीज़ बताई गई जगह पर, आरोपी की जानकारी में छिपाई गई थी।

37. रूमी बोरा दत्ता बनाम असम राज्य मामले में, आरोपी के कबूलनामे से एक चाकू और रस्सी मिली और मेडिकल सबूतों से यह बात पक्की हुई कि मरने वाले की मौत गला घोटने से हुई थी और उसकी छाती पर भी चाकू से चोट लगी थी। आरोपियों द्वारा छिपाए गए और उनकी जानकारी पर बरामद किए गए हथियारों का सीधा संबंध पोस्टमॉर्टम प्रतिवेदन में मिली चोटों से था। राजा बनाम हरियाणा राज्य मामले में, चाकू और खून से सने कपड़े और जले हुए कंबल की राख बरामद हुई थी। खून से सने कपड़े और हथियार विधि विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए, जिसकी प्रतिवेदन में साफ तौर पर कपड़ों और चाकू पर खून के धब्बे दिखे, जबकि ब्लड ग्रुप मैच नहीं कर रहा था। जॉन पांडियन बनाम राज्य मामले पर भरोसा करते हुए, यह माना गया कि आरोपी ने इस बारे में कोई सफाई नहीं दी है कि कपड़ों और चाकू पर इंसानी खून कैसे मिला, जो एक गंभीर मामला था।
38. ऊपर दिए गए सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जब हम की गई रिकवरी को देखते हैं, भले ही जांच अधिकारियों की गवाही पर यकीन कर लिया जाए, कि उस व्यक्ति और ए 2 से ए 6 के रहने की जगहों से बिना किसी वजह के पैसे मिले थे, तो वे धारा 27 के तहत रिकवरी नहीं थीं। यह रिकवरी एक ज़ब्ती जैसी थी, न कि दी गई जानकारी या रिकॉर्ड किए गए कबूलनामे पर की गई। इसके अलावा, कैश का क्राइम से कोई लेना-देना नहीं है। जैसा कि हमने माना, महाज़र ने भी बरामद नगद की सही सूची नहीं बनाई थी और न्यायालय में जो पहचान की गई, वह उन बंडलों की थी जिनमें नगन ज़ब्त किया गया था। सवाल यह उठता है कि आरोपी के पास इतनी बड़ी मात्रा में कैश कैसे आया, जो अगर उनकी हैसियत और इनकम के सोर्स से बाहर पाया जाता है, तो कार्रवाई कहीं और शुरू करनी होगी और जब तक यह साफ तौर पर साबित नहीं हो जाता कि पैसे का लेन-देन, साज़िश को आगे बढ़ाने के लिए किया गया था, जो ऊपर दिए गए मामले में बिल्कुल नहीं है, तब तक रिकवरी अभियोजन की मदद नहीं कर सकती।
39. ए5 और ए6 ने जो कपड़े और चाकू पहने थे और जिनका इस्तेमाल उन्होंने जुर्म करने के लिए किया था, उन्हें ए3, जो कथित साज़िशकर्ता है, के स्वीकारोक्ति बयान पर बरामद किया गया। यह सच है कि कपड़ों और चाकू पर खून के धब्बे थे, जो 'ओ' ग्रुप के पाए गए, जो शव परिक्षण प्रतिवेदन में मिले आरोपी के ब्लड ग्रुप से मेल खाते थे। हमने यह ज़रूर देखा है कि ए3 पर

असल में जुर्म करने का आरोप नहीं है, यानी मृतक विक्टिम को काटना, यह साबित करने के लिए कोई अलग सबूत भी नहीं है कि ए5 और ए6 ने ए3 को कपड़े और चाकू दिए थे। ए3 का स्वीकारोक्ति बयान कि कपड़े और चाकू उसे ए5 और ए6 ने दिए थे, वह हिस्ट्री है, जिसे दूसरे सबूतों से पक्के तौर पर साबित करना होगा। जो बात सामने आई है वह यह है कि ए3 ने कपड़े और चाकू छिपाए थे, और छिपाने की इस बात को असली जुर्म से जोड़ना होगा। इस मामले में, न तो कपड़े या चाकू ए5 और ए6 से जुड़े हैं, जिन पर जुर्म करने का आरोप है और न ही ए3, जो एक कथित साज़िशकर्ता है, पर जुर्म में शामिल होने का आरोप है, यानी मृतक की हत्या। इसके अलावा, यह भी वेरिफ़ाई नहीं किया गया कि बरामद कपड़े ए5 और ए6 के हैं या नहीं, इस मामले में कपड़ों पर मिले खून के बारे में कोई सफ़ाई नहीं है। ए1 ने जिन जगहों पर साज़िश रची गई थी और पैसे का लेन-देन हुआ था, उनके बारे में जो कहा गया है, उससे कोई सच सामने नहीं आता। साज़िश और पैसे के लेन-देन के बारे में बताया गया बयान मंज़ूर नहीं है और सिर्फ़ दो जगहों की ओर इशारा करने से कोई सच सामने नहीं आता, जब बयान को छोड़ दिया जाता है।

40. उच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम के धारा 30 पर यह फैसला सुनाया है कि को-एक्ज़ीक्यूटेड के कन्फेशन का इस्तेमाल दूसरे आरोपियों के खिलाफ किया जा सकता है। यह माना गया कि धारा 30, एक्स्ट्रा-ज्यूडिशियल कन्फेशन या अपराधिक प्रक्रिया संहिता के धारा 164 के तहत किए गए बयान के अलावा धारा 27 के बयान को भी अपने दायरे में लाएगा; जिनमें से आखिरी दो इस मामले में पूरी तरह से गायब हैं। जहां तक धारा 30 का सवाल है, कश्मीरा सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य में यह माना गया:

“इस तरह के केस को देखने का सही तरीका है, सबसे पहले, आरोपी के खिलाफ सबूतों को इकट्ठा करना, जिसमें कन्फेशन को पूरी तरह से शामिल न किया जाए और यह देखना कि अगर उस पर विश्वास किया जाता है, तो क्या उसके आधार पर सुरक्षित रूप से सज़ा दी जा सकती है। अगर स्वीकारोक्ति बयान के बिना भी उस पर विश्वास किया जा सकता है, तो बेशक कन्फेशन को मदद के तौर पर बुलाने की ज़रूरत नहीं है। लेकिन ऐसे मामले भी आ सकते हैं जहाँ जज दूसरे सबूतों के आधार पर कार्रवाई करने के लिए तैयार नहीं है, भले ही अगर उस पर विश्वास किया जाए, तो वह सज़ा

बनाए रखने के लिए काफी होगा। ऐसी स्थिति में, न्यायाधीश स्वीकारोक्ति बयान को मदद के तौर पर बुला सकता है और दूसरे सबूतों को भरोसा दिलाने के लिए उसका इस्तेमाल कर सकता है और इस तरह खुद को उस बात पर विश्वास करने के लिए मज़बूत कर सकता है जिसे कन्फेशन की मदद के बिना वह मानने को तैयार नहीं होगा।”

41. हरिचरण कुर्मी बनाम बिहार राज्य मामले में एक कॉन्स्टिट्यूशन बेंच ने माना कि धारा 30 में बताया गया स्वीकारोक्ति बयान, साक्ष्य अधिनियम के धारा 3 के तहत सबूत नहीं है। हम उस फैसले के पैराग्राफ 13 से यह निकालते हैं:

“... इसलिए, नतीजा यह है कि किसी आरोपी व्यक्ति के खिलाफ केस देखते समय, न्यायालय सह-आरोपी व्यक्ति के कन्फेशन से शुरू नहीं कर सकता; उसे अभियोजन द्वारा पेश किए गए दूसरे सबूतों से शुरू करना होगा और जब वह उस सबूत की गुणवत्ता और असर के बारे में अपनी राय बना ले, तो उस कन्फेशन को देखना जायज़ है ताकि न्यायिक मंशा उस नतीजे पर पहुंचने वाला है जिस पर वह दूसरे सबूतों के आधार पर पहुंचने वाला है। संक्षेप में, यही धारा 30 में शामिल प्रावधान का असर है। यही राय इस न्यायालय ने कश्मीरा सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1952) 1 एस एस सी 275 में भी जताई थी, जहां भुबोनी साहू केस में प्रिवी काउंसिल के फैसले को मंजूरी के साथ बताया गया है।”

42. पुलुकुरी कोट्टाया में प्रिवी काउंसिल ने अथप्पा गौंडन के केस में गलत फैसला सुनाया था। जब धारा 27 के तहत कन्फेशन के आधार पर की गई रिकवरी भी, उस व्यक्ति को दोषी नहीं ठहरा सकती जिसने ऐसा स्वीकारोक्ति बयान दिया था, अगर कोई अलग सबूत नहीं है जो पता चली बात को जुर्म से जोड़ता हो, तो ऐसे स्विकारोक्ति का इस्तेमाल दूसरे आरोपियों को साक्ष्य अधिनियम के धारा 30 के तहत दोषी ठहराने के लिए करने का कोई सवाल ही नहीं उठता।
43. धारा 27 और धारा 30 के असर और प्रभाव को छोड़ने से पहले, हम पांडुरंग कालू पाटिल में बताई गई सावधानी को दोहराए बिना नहीं रह सकते, जिसमें बॉम्बे उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ के उस फैसले पर सवाल उठाया गया था जो पुलुकुरी कोट्टाया के अनुपात से सहमत

नहीं था। उस संदर्भ में इस न्यायालय ने स्टेट बनाम छगनलाल गंगाराम लावर के फैसले का ज़िक्र किया और पेज 6 के पैराग्राफ 10 से एक हिस्सा लिया जो नीचे दिया गया है:

“जब तक सर्वोच्च न्यायालय प्रिवी काउंसिल के नज़रिए से अलग नज़रिया नहीं रखता, तब तक प्रिवी काउंसिल के फैसले हम पर लागू होते हैं, और जब हम कहते हैं कि प्रिवी काउंसिल के फैसले हम पर लागू होते हैं, तो जो चीज़ लागू होती है वह सिर्फ़ असल में तय किया गया मुद्दा नहीं है, बल्कि प्रिवी काउंसिल द्वारा दी गई राय है, जो राय सभी तर्कों पर ध्यान से सोचने के बाद दी जाती है और जो जानबूझकर और सोच-समझकर दी जाती है।”

44. यह माना गया कि पुलुकुरी कोट्टाया पर इस न्यायालय ने बार-बार विचार किया और उसे टेस्ट किया और ऐसे सभी मौकों पर, हाल ही में, जैसा कि हमने नवजोत संधू में देखा, इसके अनुपात को फिर से पुष्टि किया गया। कर्नाटक उच्च न्यायालय की खंडपीठ का ध्यान पुलुकुरी कोट्टाया में प्रिवी काउंसिल के फैसले की ओर साफ़ तौर पर नहीं गया, जिसे भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने पुष्टि किया और फिर से कन्फर्म किया, जिसमें, मद्रास उच्च न्यायालय के अथप्पा गौंडन में पूर्ण पीठ के फैसले को, जिस पर विवादित फैसले में भरोसा किया गया था, खारिज कर दिया गया था।
45. इस मामले में, हम पहले ही यह मान चुके हैं कि धारा 27 के तहत स्वीकारोक्ति पर भरोसा नहीं किया जा सकता है और दूसरे आरोपियों को फंसाने के लिए इससे कोई मदद लेने का कोई सवाल ही नहीं है। जहां तक ए1 द्वारा बताई गई बातों का सवाल है, हमने पाया है कि इससे किसी तथ्य का पता नहीं चला और यह साक्ष्य अधिनियम के धारा 25 और 26 के तहत आता है।
46. हम यह ज़रूर देख सकते हैं कि विचारण न्यायालय के बरी करने के आदेश को पलटने वाला उच्च न्यायालय का फैसला सिर्फ़ अंदाज़ों और अंदाज़ों पर आधारित है, जो पूरी तरह से इन्वेस्टिगेटिंग ऑफिसर्स की गवाही पर निर्भर है, जिन्होंने सिर्फ़ धारा 161 के तहत दर्ज बयानों और आरोपी के अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों को दोहराया था। जैसा कि रमेश बनाम हरियाणा राज्य में सही कहा गया है, जब अपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के तहत दर्ज

बयानों से इनकार किया जाता है, तो यह संभावना बनती है कि पुलिस ने ऐसे बयान ज़बरदस्ती दिलवाए हों, लेकिन ऐसे मामलों की बड़ी संख्या को देखते हुए, जैसा कि इस मामले में हुआ, जिसमें सभी गवाह मुकर गए, इसके कई और कारण भी हो सकते हैं। यह आरोपी के खिलाफ़ गवाही देने के डर, राजनीतिक दबाव, परिवार या समाज का दबाव और यहाँ तक कि पैसे के लेन-देन के मामले भी हो सकते हैं। हमें नहीं लगता कि उच्च न्यायालय इस फैसले पर भरोसा कर सकता था कि विचारण में गवाहों के विरोध का कारण सिर्फ़ आरोपी का असर हो सकता है, जिसने मृतक की पत्नी को भी विरोध करने के लिए मनाया था; यह तर्क गलत और बेतुका है।

47. हम जजों की हैरानी को अच्छी तरह समझते हैं, एक इंसान की बेरहमी से हत्या, जो उसके अपने बेटे के सामने की गई थी, जहाँ अनुसंधान तो बहुत डिटेल में थी, लेकिन विचारण में बुरी तरह फेल हो गई, जहाँ अभियोजन के गवाह; सभी, अपने बयान से पलट गए। हम जजों की हैरानी समझते हैं, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हम धारा 161 के बयानों या अनुसंधान एजेंसी की तथाकथित स्वैक्षिक बयानों और की गई बरामदगी के आधार पर लिखी गई कहानी पर भरोसा करें, जिसे अभियोजन क्राइम से जुड़ा साबित करने में नाकाम रहा। हमने यह भी देखा कि एक टेस्ट पहचान परेड की गई थी, जिसमें भी पी डब्लू 1, पी डब्लू 8 और पी डब्लू 9 हमलावरों की पहचान करने में नाकाम रहे। हम यह बात पूरी तरह से ध्यान में रखते हुए कह रहे हैं कि टीआईपी सिर्फ़ पहचान में मदद के लिए होती है, लेकिन यह इस बात को ध्यान में रखते हुए कि यह हमेशा न्यायालय में की गई पहचान को सपोर्ट दे सकती है, जो बदकिस्मती से इस मामले में न तो न्यायालय में की गई और न ही पहचान के स्टेज पर। हमें उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दोषसिद्धि को बरकरार रखने का कोई कारण नहीं दिखता, जिसने बरी करने के आदेश को पलट दिया।

48. हालांकि उच्च न्यायालय ने चंद्रप्पा पर खास तौर पर ध्यान दिया था, लेकिन बरी करने का आदेश रद्द करते समय सिद्धांतों को ठीक से नहीं समझा गया। इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि जब पेश किए गए सबूतों से दो सही राय मुमकिन हों, तो आरोपी के पक्ष में वाली राय अपनाई जानी चाहिए, खासकर इसलिए क्योंकि दोषी साबित होने तक आरोपी को बेगुनाह माना जाता है, जो

अपराधिक न्यायशास्त्र का एक बुनियादी सिद्धांत है, बरी करने के ऑर्डर से और मज़बूत होता है। इस मामले में, हमें डर है कि सबूतों से दो राय भी सामने नहीं आ रही हैं। एकमात्र राय जो सामने आती है वह यह है कि अभियोजन हर आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित करने में पूरी तरह से नाकाम रहा, और भी ज़्यादा इसलिए क्योंकि विचारण के दौरान न्यायालय के सामने पेश किए गए सभी गवाहों ने अनजान कारणों से अपने बयान बदल दिए। इस तरह की दुश्मनी के पीछे जो भी कारण हो, इससे अनुसंधान कर्ता की गवाही के आधार पर, जो सिर्फ धारा 161 के बयानों और आरोपी के अपनी मर्ज़ी से दिए गए बयानों पर आधारित है, सज़ा नहीं हो सकती; पहला मामला अपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 162 का उल्लंघन है और दूसरा मामला साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 और 26 का उल्लंघन है।

49. हम यह ज़रूर कह सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने सबूतों के आधार पर आरोपी को दोषी ठहराने में बहुत बड़ी गलती की है और बिना किसी कानूनी सबूत के अभियोजन की बनाई कहानी के आधार पर अंदाज़े और धारणाएँ बना ली हैं। सच हमेशा एक कल्पना होती है और इसके आस-पास का भ्रम सिर्फ़ सही सबूतों से ही दूर किया जा सकता है, चाहे वे सीधे हों या अप्रत्यक्ष, और अगर वे हालात के हिसाब से हों, तो हालात की एक चेन बनाकर आरोपी के दोषी होने और सिर्फ़ आरोपी के दोषी होने के नतीजे पर पहुँचाया जा सकता है, बिना किसी बेगुनाही की किसी भी परिकल्पना पर कोई शक छोड़े। हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ की घबराहट को सिर्फ़ मान सकते हैं और उसमें हिस्सा ले सकते हैं, जो पूरी कोशिश के बेकार होने की वजह से निराशा की हद तक है। यह एक काम का खतरा है, जिसके साथ हर न्यायाधीश को जीना सीखना चाहिए, जो सही रास्ते पर चलने और उन आरोपियों को किसी भी तरह दोषी ठहराने के लिए प्रेरित नहीं हो सकता, तब भी जब कानूनी सबूत पूरी तरह से न हों; पूरी तरह से नैतिक विश्वास में आना, जो अपराधिक न्यायशास्त्र के लिए पूरी तरह से निंदनीय है। अनसुलझे अपराध के लिए भारी मन से, लेकिन आरोपियों के खिलाफ सबूतों की कमी के मुद्दे पर बिल्कुल भी शक किए बिना, हम उच्च न्यायालय के फैसले को पलटते हुए और विचारण न्यायालय के फैसले को बहाल करते हुए आरोपियों को बरी करते हैं।

50. अपराधिक अपील मंजूर की गई।

51. अगर आरोपी हिरासत में है और किसी दूसरे केस में उसकी ज़रूरत नहीं है, तो उसे तुरंत रिहा कर दिया जाएगा और अगर वह पहले ही बेल पर रिहा हो चुका है, तो उसके जमानत बॉन्ड रद्द हो जाएंगे।
52. अगर कोई लंबित आवेदन है, तो उसे निपटा दिया जाएगा।

मामला का परिणाम : अपील मंजूर।

शीर्ष टिप्पणियाँ दिव्या पांडेय द्वारा तैयार किए गए हैं।

यह अनुवाद अधिवक्ता ज्ञान रंजन, पैनल अनुवादक के द्वारा किया गया।